मुष्टि प्रहार हनत सब भागे

श्री अवध किशोर दूबे, ग्राम पोस्ट - पूर्व डीहा (करम डीह)
जिला - पलाम, झारखण्ड-822110, फोन : 8409925271

सीतान्वेषण के पश्चात वानर, उनके लिये ही आरक्षित उपवन में जब टोली–नायक अंगद जी की सहमति से फल खाने लगे, तब रक्षकों ने मना किया, किन्तु वानर दल नहीं माना तथा रक्षकों को ही प्रताड़ित करने लगा। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

तब मधुबन भीतर सब आए। अंगद संमत मधु फल खाए॥
रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब भागे॥

(5/28/7–8)

जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज॥

(5/28)

इस प्रसंग से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि लोग कैसे तिल को ताड़ बना देते हैं। यहाँ इतनी सीधी सी बात है कि जब हनुमानजी सभी बंदरों को समुद्र तट पर रहने को कहकर लंका गए थे तो उन्हें समुद्र तट पर पर्याप्त भोजन नहीं मिला था। वे कहकर गए थे –

तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई॥

(5/1/2)

ये सभी बन्दर कई दिनों से भूखे हैं, अतः युवराज का कर्तव्य बनता है कि उनके लिए भोजन की व्यवस्था करें। विडम्बना देखिए कि जहाँ राजा सुग्रीव के बाग में फल भरे हुए हैं और बन्दर यानी उनकी प्रजा भूखी है, अतः अंगद ने उन्हें फल खाने की अनुमति देकर कोई भूल नहीं की, क्योंकि राजा की सम्पत्ति प्रजा के लिए ही होती है, परन्तु इसके रखवाले राजा और प्रजा के बीच में दीवार बन जाते हैं। ये चमचा प्रवृत्ति वाले शासक के पास जाकर किसी बात को बहुत बढ़ा चढ़ा कर कहते हैं, जिसका यहाँ सटीक उदाहरण है कि **अंगद संमत मधु फल खाए।** बन्दरों ने अंगद की सहमति से फल भक्षण किये हैं और रखवाले कह रहे हैं **'बन उजार' जुबराज!!**

रखवाले कहते हैं – हे वानर राज! आपके प्रिय बाग मधुबन को युवराज अंगद ने उजाड़ दिया। सुग्रीव ने अंगद को सेना नायक बना कर भेजा है और अंगद युवराज हैं, अतः यदि रखवालों के मन में खोट नहीं होती तो वे युवराज की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करते। रखवाले के इसी व्यवहार से क्रुद्ध होकर बन्दर उन्हें मारते हैं, लेकिन ये रखवाले भी बहुत दाँव पेंच जानते हैं। तो आइए इसके पीछे के कारणों पर चलते हैं।

बालि–वध के बाद सुग्रीव राजा बने और उन्होंने अपने साले दधिमुख को मधुबन के रक्षकों का प्रभारी नियुक्त किया, परन्तु यह दधिमुख महाभारत के शकुनि मामा की तरह ही बनने लगा। दधिमुख की हार्दिक इच्छा थी कि अंगद नहीं, बल्कि उसकी बहिन रूमा के पुत्र को ही युवराज बनना चाहिए। (समुद्र तट पर अंगद का कथन– **राखा राम निहोर न ओही।** अर्थात् सुग्रीव तो मुझे कब के मार डालते, लेकिन श्रीराम जी ने युवराज बना कर सब प्रकार से मेरी रक्षा की) लेकिन दधिमुख की दाल नहीं गली, पर मन में खटक रहा है, अतः उसने सुग्रीव से शिकायत रूप में सीधे कह दिया– **'बन उजार जुबराज।'**

महाराज! उस उद्दण्ड, राजद्रोही अंगद को सजा मिलनी चाहिए, लेकिन एक बात पर विशेष ध्यान देंगे कि यदि राजा अपने विवेक का प्रयोग करते हुए निर्णय लेता हो अर्थात धृतराष्ट्र दृष्टि न हो तो शकुनि मामा की कभी दाल नहीं गलेगी। दधिमुख ने सीधे तौर पर कहा कि युवराज ने मधुबन उजाड़ दिया, अतः सुग्रीव को क्रोधित होना चाहिए था? पर सुग्रीव हर्षित होते हैं– **'सुनि सुग्रीव हरष।'**

सुग्रीव कहते हैं कि – आहाहाहा! आनन्द आ गया! आश्चर्य चकित होकर दधिमुख प्रश्न करता है– राजन! मुझे मार पड़ी है, मधुबन उजड़ गया है और आप प्रसन्न हो रहे हैं। आखिर क्यों?

सुग्रीव– क्योंकि मैं सच्चाई जान गया हूँ।

दधिमुख – तो क्या मैंने असत्य कहा है? (कहते हैं कि चोर की दाढ़ी में तिनका अर्थात दधिमुख सशंकित है)

सुग्रीव– प्रिय साले जी! यह सत्य है कि आपको मार पड़ी है और हो सकता है कि मधुबन उजड़ गया हो, लेकिन मेरी प्रसन्नता का कुछ और कारण है दधिमुख।

दधिमुख– आप क्यों प्रसन्न हैं?

सुग्रीव– मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि वे श्रीराम कार्य करने में सफल हो गए हैं – **करि आए प्रभु काज।**

सुग्रीव पूछते हैं – अच्छा तुम्हीं बताओ कि उनके मुख पर प्रसन्नता थी कि नहीं? उनमें उत्साह था कि नहीं?

दधिमुख– वे सभी बहुत प्रसन्न थे और सभी हनुमान का बहुत आदर कर रहे थे। सभी बन्दर हनुमान की जय जयकार कर रहे थे।

सुग्रीव– बस! इसलिए तो कहता हूँ कि श्रीराम कार्य हो गया!

उन्होंने सीता जी का समाचार प्राप्त कर लिया। तुम अपनी चोट की चिन्ता छोड़ कर जरा विवेक का प्रयोग करो कि यदि वे सीता जी का समाचार प्राप्त नहीं करते तो उन्हें इस ओर आने का साहस होता? उन्हें मेरी स्पष्ट आज्ञा थी कि –

जनकसुता कहुँ खोजहु जाई। मास दिवस महँ आएहु भाई।।
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ। आवइ बनिहि सो मोहि मराएँ।।

(4/22/7–8)

और ये उस एक महीने की अवधि के बाद ही इधर आ रहे हैं? और आने में भय भी नहीं, बल्कि उत्साह? अच्छा जरा तुम्हीं विचार करो कि–

जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई।।

(5/29/1)

उन्हें मालूम है कि तुम मुझे प्रिय हो और उन्होंने तुम्हें मारने का साहस किया। दधिमुख उदास होकर कहता है कि चलिए हम मान लेते हैं कि उन्होंने श्रीराम कार्य करने में सफलता प्राप्त की है, परन्तु उन्होंने मुझे मारा है सो? यह अनुचित है कि नहीं? (दधिमुख रोने लगता है ताकि सुग्रीव पर कुछ प्रभाव पड़े और वे अंगद को सजा दें, लेकिन आज सुग्रीव पर ये दाँव पेंच निष्फल हो गए। श्रीराम कृपा से आज सुग्रीव को न मधुबन से मोह है और न साले के बहकावे में आने वाले हैं, बल्कि वे अब खुल कर कहने लगे।)

सुग्रीव– दधिमुख! तुम छोड़ो ये दाँवपेंच!

अरे भाई जरा स्मरण करो कि बालि ने मुझे कितना मारा था– **मारेसि अति भारी।**

तुम्हारे शरीर पर उतने दाग भी नहीं हैं जितना बालि की मार से मेरे शरीर पर घाव हो गए थे – **'तन बहु ब्रन, चिन्ता जर छाती।**

उसका परिणाम क्या हुआ?

बालि परम हित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम्ह समन बिषादा।।

(4/7/19)

उसके बाद मुझे श्रीराम जी मिल गए और मेरा कल्याण हो गया। दधिमुख! उसी प्रकार तुम्हारे शरीर पर लगी चोट से तुम्हारा भी कल्याण होगा।

दधिमुख – कैसे?

सुग्रीव – क्योंकि यदि तुम उनसे मार नहीं खाते तो यहाँ नहीं आते और यदि यहाँ नहीं आते तो श्रीराम जी के साथ चलने और उनके दर्शन से वंचित रह जाते। यदि बाग उजड़ गए तो पुनः ठीक हो जाएँगे।

तुम्हारे शरीर पर लगी चोट भी ठीक हो जाएगी, लेकिन तुम मधुबन के मोह में रह जाते तो श्रीराम जी की सेना में सम्मिलित होने का परम सौभाग्य तुम्हें नहीं मिलता। अब तुम्हें श्रीराम जी के पास चलना है, अतः अपने मन के अन्दर के मैल अर्थात ये दाँवपेंच त्याग दो। (**निर्मल मन जन सो मोहि पावा....**) और आनन्द पूर्वक श्रीराम जी के पास चलो।

राजा सुग्रीव ने विवेक का प्रयोग किया और दधिमुख शकुनि मामा के समान दाँवपेंच त्याग कर श्रीराम जी की सेना में सम्मिलित हो जाता है –

द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत बलरासि।।

(5/54)

सदाशिव - महिमा अकथ अपार

विपुल कज्जल गिरि का कर चूर्ण, उसे फिर सिन्धु-पात्र में घोल।
कल्पतरु - शाखाओं की कलम, बना कर कागज धरणी गोल।।
इन्हें लेकर यदि पूरे काल, शारदा शिव-गुण लिखें अपार।
तदपि वे भी न पा सकें 'सरल' शंभु के अगम गुणों का पार।।

कहाँ यह मेरा लघु मन कुटिल, भरे हैं जिसमें बहुत विकार।
कहाँ शिवशंकर भोलेनाथ, तुम्हारी महिमा अकथ अपार।।
'सरल' शिव-सेवक विस्मित, किन्तु भक्तिवश अपनी मति अनुसार।
आपके मंगलमय पद-कंज, समर्पित भाव-पुष्प का हार।।

— सरल

सारद दारुनारि सम स्वामी। राम सूत्रधर अन्तरजामी।
जेहि पर कृपा करहिं जन जानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी।।

अर्थात् सारद दारु नारि; दारु माने लकड़ी और नारि माने स्त्री। अतः दारुनारि माने कठपुतली। कठपुतली स्वयं तो जड़ है परन्तु पतला धागा बांधकर वह धागा पकड़ने वाला अपनी उँगली के इशारे से कठपुतली को नचाता है। मतलब इस पंक्ति के भाव के अनुसार सरस्वती भी एक कठपुतली हैं जिसका धागा पकड़ने वाले राम जी हमारे हृदय में विराजमान हैं। राम जी जिसको अपना दास स्वीकार करके अपनी उँगली का इशारा करके उसके हृदय में सरस्वती रूपी कठपुतली को नचा देंगे वही कवि राम जी के गुण गान में सफल हो पाएगा।

जुग सहस्र जोजन पर भानू। लील्यो ताहि मधुर फल जानू।।

1 युग = 12000 वर्ष
1 सहस्र = 1000 वर्ष
1 योजन = 8 मील
युग × सहस्र × योजन = पर भानु
12000 × 1000 × 8 मील = 96000000 मील
1 मील = 1.6 कि0मी0
96000000 × 1.6 = 153600000 कि0मी0
अर्थात् हनुमान चालीसा के अनुसार सूर्य पृथ्वी से 153600000 कि0मी0 की दूरी पर है।
NASA के अनुसार भी सूर्य पृथ्वी से 150 मिलियन किलोमीटर दूरी पर है।

रामकथा सुंदर कर तारी

श्रीमती राजवती शर्मा,
116, होशियारपुर, सेक्टर-51, नोएडा मो0 : 9650721742

चौरासी लाख योनियों में मनुष्य की योनि सर्वश्रेष्ठ है। यह देवदुर्लभ मानव शरीर हमें बड़े भाग्य से प्राप्त हुआ है –

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।

(7/43/7)

मानव तन की प्राप्ति में जीव का अपना पुरुषार्थ नहीं है, अपितु ईश्वर की करुणा से ही मनुष्य शरीर मिलता है –

कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही।।

(7/44/5)

प्रेम के सागर भगवान बिना कारण ही जीव पर करुणा करके मनुष्य का शरीर इसीलिए देते हैं कि वह मनुष्य शरीर से अपना कल्याण कर सके यानी संसार के आवागमन के चक्र से छूट जाये। यह मनुष्य शरीर कल्याण का सबसे बड़ा साधन और मोक्ष का द्वार है, इसे पाकर भी जिसने अपना परलोक न सँवारा, वह परलोक में दुःख पाता है और अपना सिर पीट–पीट कर पछताता है, परन्तु मनुष्य शरीर पाकर भी अपना कल्याण करना इतना सरल नहीं है, क्योंकि कलियुग ने अपनी काम, क्रोध, लोभ, मोह, झूठ, कपट, छल–छिद्र, पाखण्ड, दुराचार, व्यभिचार रूपी विशाल बलिष्ठ भुजाओं में मनुष्य को जकड़ रखा है और कुमार्ग पर लाकर पतन के गर्त में धकेल दिया है। ऐसी विषम विकट परिस्थिति में मनुष्य अपना कल्याण तो तब करे, जब पहले कलियुग की बलिष्ठ भुजाओं से छूटे।

अब सर्वप्रथम प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य कलियुग की बलिष्ठ भुजाओं से कैसे छूटे?

कलियुग की बलिष्ठ भुजाओं से छूटने और पतन–गर्त से निकलने का एकमात्र सहज, सरल और सुलभ उपाय है– भगवान श्रीराम की पावन कथा, क्योंकि संतशिरोमणि तुलसीदास अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस में लिखते हैं –

रामकथा कलि बिटप कुठारी। सादर सुनु गिरिराजकुमारी।।

(1/114/2)

(भगवान शिव भगवती पार्वती को रामकथा की महिमा बतलाते हुए कहते हैं– हे गिरिराज कुमारी पार्वती! रामकथा कलियुग रूपी विशाल वृक्ष की विशाल भुजाओं को काटने के लिये विकट कुल्हाड़ी है।)

भगवान शिव के कथनानुसार मानव–कल्याणकारी रामकथा को सुनना चाहिए, परन्तु रामकथा को समझने से पहले राम को समझना आवश्यक है, इसीलिए अब यहाँ यह प्रश्न उठना स्वभाविक है कि –

राम कौन हैं?

इस सम्पूर्ण सृष्टि का निर्माण, पालन और संहार करने वाले ईश्वर हैं। यद्यपि ईश्वर मूल रूप से तो निर्गुण–निराकार ही हैं, परन्तु सृष्टि के समय वे निर्गुण से सगुण बन जाते हैं। उनका वह सगुण रूप निराकार ही होता है, परन्तु वे अपने भक्तों का कल्याण करने के लिये उनकी इच्छा से निराकार से साकार बन जाते हैं। निराकार से साकार रूप धारण करना ही ईश्वर का अवतार कहलाता है। शास्त्रों में ईश्वर के 24 अवतारों की गणना की गयी है, परन्तु उनमें 10 अवतार मुख्य हैं और 10 अवतारों में भी राम–कृष्ण के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, अतः राम ईश्वर हैं 'राम' शब्द का अर्थ है – वह तत्व जिसमें योगी पुरुष रमण करते हैं, उसे राम कहते हैं –

रमन्ते योगिनो यस्मिन् सः रामः।

श्रीराम में भक्तजन रमते हैं तथा श्रीराम अपने भक्तों को अपने नाम, रूप, लीला, गुण आदि के द्वारा रमाते हैं, इसीलिए राम कहलाते हैं। राम अनंत कोटि ब्रह्मांडनायक, सच्चिदानंदकंद परब्रह्म हैं। वे एक, सत्य, अनंत, अखंड, अचिन्त्य, अविनाशी, घट–घटवासी शुद्ध ब्रह्म हैं। वही जगत के कर्त्ता, भर्त्ता, संहर्त्ता हैं। वही एक साथ निर्गुण–सगुण, निराकार–साकार रूप हैं। वही चराचर जगत के ईश्वर (जिसमें निःसीम जीवन, निःसीम ज्ञान, निःसीम आनंद, निःसीम स्वतंत्रता और निःसीम हुकूमत है– वह ईश्वर है) हैं। वे काल के भी काल, मन–बुद्धि–वाणी से परे, सर्वप्रेरक, सर्वान्तर्यामी और भुक्ति–मुक्ति दाता हैं। वे भक्तवत्सल करुणासागर हैं। राम विग्रहवान धर्म हैं –

रामो विग्रहवान् धर्मः।

श्रीराम साधु–रक्षा और धर्म–संस्थापन के लिये युग–युग में अवतार लेते हैं, जैसा कि लोकनायक कवि संत तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में लिखा है –

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हि असुर अधम अभिमानी।।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

(1 / 121 / 6–8)

(जब–जब धर्म का पतन होता है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं और वे अन्याय करने लगते हैं। ब्राह्मण, गाय, देवता और पृथ्वी को कष्ट देते हैं, तब तब कृपानिधान प्रभु भाँति–भाँति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।)

भगवान राम का अवतार हर त्रेतायुग में होता है। वाल्मीकीय रामायण के अनुसार त्रिलोकविजयी राक्षसराज लंकापति रावण के अत्याचार से संत्रस्त देवताओं के प्रार्थना करने पर रावण का सकुल संहार करने के लिये भगवान विष्णु ही महाराज दशरथ के घर राम रूप में अवतरित हुये, परन्तु भगवान राम का शरीर दशरथ–कौसल्या के शुक्र–शोणित से पैदा नहीं हुआ था और न वह माता कौसल्या के गर्भ में पले थे। वह हमारे शरीर की तरह हाड़–माँस का पुतला नहीं थे, अपितु भगवान राम का शरीर सत् चित आनंद तत्वों से निर्मित दिव्य शरीर था, जैसा कि श्रीरामचरितमानस में लिखा है –

चिदानंदमय देह तुम्हारी।

(2 / 127 / 5)

कहने का तात्पर्य यह है कि राम भगवान हैं। राम ईश्वर हैं। 'भगवान' शब्द का अर्थ है– भग मायने ऐश्वर्य और वान मायने युक्त यानी ऐश्वर्य से युक्त अर्थात् जिसमें असीम ऐश्वर्य, असीम धर्म, असीम यश, असीम शोभा, असीम ज्ञान और असीम वैराग्य है, वह भगवान है –

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः।
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना॥

'ईश्वर' शब्द का अर्थ है – जिससे सब प्राणी उत्पन्न होते हैं, जिससे जीते हैं और जिसमें फिर मिल जाते हैं, वह ईश्वर है –

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति।

राम कौन है? इसकी एक काव्यात्मक झलक देखिये –

राम नहीं साधारण मानव
वे अविनाशी परमेश्वर।
धर्मोत्थान असुर-वध करने
प्रकटे नर-तन सर्वेश्वर॥

राम सच्चिदानंदकंदघन
जगन्नियंता करुणालय।
अनल पवन नभ रूप वही तो
वही धराधर वरुणालय॥

नारायण जगदीश विधाता
धरणीधर करुणासागर।
वे ही जीवन-नौकाओं को
पार लगाते भव-सागर॥

कट जाते त्रय ताप शाप सब
राम नाम जप करने से।
भव-सागर से तर जाते नर
राम-कथा रस पीने से॥

- **सरल**

अब प्रश्न उठता है कि राम-कथा क्या है?

राम नाम के उच्चारण से भगवान राम के साक्षात् दर्शन होते हैं। जिनके नाम की इतनी महिमा है, उन्हीं क्षराक्षर से परे, वेदान्तवेद्य पुरुषोत्तम भगवान राम की परम पावनमयी कथा के विषय में तो कहना ही क्या। संसार के जन्म–कर्म की कथा तो जन्म–कर्म के बंधन में जकड़ती है, परन्तु भगवान के जन्म–कर्म की कथा संसार के बंधन से छुड़ाती है, अतः भगवान श्रीराम के जन्म–कर्म की कथा साक्षात् भगवान राम का स्वरूप ही है, जैसा कि भगवान वेदव्यास कहते हैं –

पुरुषो रामचरितं श्रवणैरूपधारयन्।
आनृशंस्य परो राजन् कर्मबंधैर्विमुच्यते॥

(जो पुरुष अपने कानों से भगवान श्रीराम का पावन चरित्र (रामकथा) सुनता है, उसे सरलता, कोमलता आदि गुणों की प्राप्ति होती है। हे परीक्षित! केवल इतना ही नहीं, वह समस्त कर्म–बंधन से मुक्त हो जाता है, अतः रामकथा वेदान्त ही है)

रामकथा शुभ कर्मों की पाठशाला है। यह मानव–समाज को मानवता, मर्यादा, नैतिक मूल्यों, सच्चरित्र, कर्तव्य, लोकव्यवहार और भक्ति के पाठ पढ़ाती है। रामकथा भगवान श्रीराम की भक्ति और प्रेम की चरम सीमा है। रामभक्त हनुमान रामकथा सुनने के बड़े रसिक हैं। विद्वानों से सुना है कि इस कलिकाल में भी जहाँ रामकथा होती है, वहाँ रामकथा–प्रेमी हनुमान बिना बुलाये प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी न किसी रूप में पहुँच ही जाते हैं और प्रेमपूर्वक भक्ति भाव से रामकथा सुनते हैं। **हनुमान रामायण वाटिका के सहजोन्मत्त भ्रमर हैं।**

रामकथा कर्म–भक्ति–ज्ञान का पावन संगम है। धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष चारों पुरुषार्थों को देने वाली है। दैहिक–दैविक–भौतिक तापों का नाश करने वाली है। मोह–भ्रम मिटाने वाली है। कठिनता से मिटने वाले दुर्भाग्य को मिटाने वाली, जन्म–मरण के भय का नाश करने वाली, विद्वानों को विश्राम देने वाली, सभी मनुष्यों को प्रसन्न करने वाली और कलियुग के पापों का नाश करने वाली है –

बुध बिश्राम सकल जन रंजनि। रामकथा कलि कलुष बिभंजनि॥

(1 / 31 / 5)

काव्य प्रकाश के प्रणेता आचार्य मम्मट ने भी सद्यः परनिवृत्ति (मोक्ष) को ही काव्य का परम प्रयोजन बतलाया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने पाँच प्रयोजन और भी बतलाये हैं –

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृत्तये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।

(काव्यप्रकाश)

काव्य से यश प्राप्ति, धन प्राप्ति, व्यवहार ज्ञान, अमंगलों का नाश और स्त्री की मधुर सम्मति के समान सरस उपदेश– ये पाँच प्रयोजन हैं –

1. यश प्राप्ति -

जब साधारण काव्य के रचने वाले कवि यश प्राप्त कर लेते हैं, तब यश के स्रोत भगवान श्रीराम की पावन कथा का गान करने वाले कवियों को यश की क्या कमी रह सकती है, क्योंकि यश देने वाले तो भगवान श्रीराम ही हैं, जैसे श्रीरामचरितमानस महाकाव्य के रचयिता संत तुलसीदास का यश संसार में छाया हुआ है।

2. धन प्राप्ति -

जब दुराचारी, अभिमानी, प्रजाशोषक क्षुद्र राजाओं की प्रशंसा करने वाले कवि भी प्रचुर धन प्राप्त कर लेते हैं, तब अखिल ब्रह्मांडनायक, सर्वगुण सम्पन्न, धर्मधुरंधर, प्रजावत्सल, प्रजा–मनोरंजन करने वाले राजराजेश्वर श्रीराम की प्रशंसा करने वाले कवियों को धन की क्या कमी रह सकती है, जैसे – वर्तमान समय में श्रीरामचरितमानस की कथा कहने वाले (कथावाचक) पर्याप्त धन प्राप्त कर रहे हैं।

3. व्यवहार ज्ञान -

प्रायः सभी संस्कृत कवियों ने अपने–अपने काव्यों द्वारा व्यावहारिक–ज्ञान की प्राप्ति के विषय में कहा है –

रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवत्

अर्थात राम के समान व्यवहार करना चाहिए, रावण के समान नहीं। भगवान श्रीराम के आचरणों का अनुकरण करने वाला अपने अन्दर विवेक, सुमति, दया, मैत्री, मुदिता, धर्मनीति, समाजनीति, सत्यपरायणता, वीरता, क्षमा, प्रेम, त्याग, सेवा आदि सद्‌गुणों को प्राप्त कर शान्ति रूपी सीता से युक्त होकर स्वयं भी राम हो सकता है –

शान्तिसीतासमायुक्तः आत्मारामो विराजते।

रामकथा से व्यवहार–ज्ञान की अद्भुत शिक्षा मिलती है। रामकथा से हमें गुरु–शिष्य, पिता–पुत्र, पति–पत्नी, भाई–भाई, भाई–बहिन आदि सम्बन्धों के पारस्परिक कर्तव्य, प्रेम और सद्‌व्यवहार का ज्ञान होता है। हमें रामकथा से मुख्य शिक्षा यही मिलती है कि **मानवता से दानवता का विनाश हो सकता है।** सच्ची मानवता की प्राप्ति होने पर ही ईश्वर की प्राप्ति होती है, इसलिये मनुष्यों को सच्ची मानवता की शिक्षा

देने के लिए ही परब्रह्म परमात्मा राम ने मानव रूप में अवतार लेकर मानवोचित लीलाएँ की हैं।

यदि हम भगवान श्रीराम द्वारा किये गए व्यवहार को अपने आचरण में ढालें तो हम अपने परिवार, समाज और राष्ट्र को सुख–शान्ति से युक्त बना सकते हैं।

4. अमंगलों का नाश -

जब अन्य धार्मिक काव्य पढ़ने–सुनने से अमंगलों का नाश हो जाता है, तब मंगल भवन अमंगल हारी राम की पावन कथा को यानी रामकथा को पढ़ने–सुनने से अमंगलों का नाश होने में क्या संदेह है?

5. कान्तासम्मित -

जिस प्रकार प्रियतमा अपने मधुर, रस पगे प्रेम वचनों से अपने प्रियतम को मुग्ध कर लेती है और प्रेम की डोरी से बाँध कर प्रेम के मार्ग पर ले जाती है, उसी प्रकार रामकथा भी मनुष्यों को उनके कल्याण के लिये धर्मतत्व, प्रेमतत्व, भक्तितत्व के रसयुक्त मधुर उपदेश देकर मनुष्यों को अखिल ब्रह्मांडनायक रघुकुलभूषण राघवेन्द्र श्रीराम के भक्त बना कर भक्ति–मार्ग पर चलाती है।

रामकथा समग्र मानवता के विजय की ज्योति–गाथा है। कहा जा सकता है कि यह समूची मानवता का प्रतिनिधित्व करती है, अतः यह मानव–जाति के लिये सन्मार्ग की मार्गदर्शिका है और हर युग के हर प्रश्न का उत्तर देने में सक्षम है।

रामकथा आनंदमयी है। इसको पढ़ने–सुनने अथवा कहने से आनंद की प्राप्ति होती है। हृदय को सुखानुभूति होती है। भगवान राम का गुणगान करना, विचार करना साक्षात् सच्चिदानंदघन राम का ही अनुभव करना है, इसलिए रामकथा व्यक्ति को कर्म–बंधन से छुटकारा दिलाने वाली है। मुक्त जन भी लीला से देह धारण कर आनंद प्राप्त करने के लिए भगवान राम की कथाओं को बड़ी श्रद्धा–भक्ति से कहते–सुनते हैं।

भगवान राम के पावन चरित्रों का गान करना श्रेष्ठ भक्ति है। जो मनुष्य भगवान श्रीराम के पावन चरित्रों को कहते हैं, सुनते हैं और गाते हैं, वे कलियुग के पाप और मन के मल को धोकर बिना श्रम किये ही श्रीराम के परम धाम (साकेत) को चले जाते हैं –

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं।।

(7 / 130 / छंद 2)

रामकथा की इतनी महिमा है, तभी तो संतशिरोमणि तुलसीदास ने रामकथा को संशय रूपी पक्षियों को उड़ाने वाली हाथों की ताली का रूपक देकर ब्रह्मानन्दाविर्भाव कराने वाली बतलाया है –

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।।

(1 / 114 / 1)

देहु एक बर भरतहि टीका

पं0 राधाकृष्ण पाठक,
भाण्डेर, (दतिया) - 475335 फोन : 8878455227

किसी माता का अपने पुत्र के लिए सुख और ऐश्वर्य की इच्छा रखना स्वाभाविक ही है। माता कैकेई का प्रथम वर भरत को अयोध्या का सिंहासन माँगना किसी आश्चर्य को प्रकट नहीं करता, लेकिन राम को वनवास माँगने का कोई कारण समझ में नहीं आता, क्योंकि माता कैकेई ने राम को अपना प्रिय पुत्र, प्राणों से अधिक प्यारा कहा है। स्नेह की प्रतिमूर्ति माँ कैकेई ने राम के राज्याभिषेक को सूर्यकुल की नीति प्रणाली का हिस्सा मानकर मंथरा को समझाया था। कहीं कोई राजतिलक में विरोध नहीं था, फिर भी मानव मन की कमजोरी, पुत्र–प्रेम की अति अभिलाषी माता ने भरत को टीका माँगकर किसी नीति व्यवस्था को जरूर बदलना चाहा होगा, लेकिन रामवनवास की माँग का कारण निश्चित ही हमें सोचने विचारने पर मजबूर करता है और तब जब माता कैकेई राम को प्राणों से भी अधिक प्रिय मानती हों –

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई। यह दिनकर कुल रीति सुहाई।।
प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरें। तिन्ह कें तिलक छोभु कस तोरें।।

(2/15/3 एवं 8)

राज्य के कुशल संचालन में राजा जितना अपने कर्त्तव्यों के प्रति जवाबदेह होता है, राजकुल भी उसके लिये उतना ही जवाबदेह होता है। यह बात महारानी कैकेई भली–भाँति जानती थीं, इसीलिए चाहे महाराज दशरथ के चक्रवर्ती राज्य की रक्षा का प्रश्न हो या प्रजा के परिचालन में किसी ऐसे विषय को हल करने का प्रश्न हो, महारानी कैकेई अपनी सक्रियता के लिये कहीं भी पीछे नहीं थीं और इसीलिए तो महाराज दशरथ को इन दो वरदानों की धरोहर संग्रामक्षेत्र में महारानी कैकेई को प्रदान करनी पड़ी थी। रनिवास की शोभा सुशोभित करने वाली कैकेई राजतंत्र की धुरी में एक कील के समान चक्रवर्ती सम्राट की महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में सुशोभित थीं। राक्षसराज (आज का आतंकवाद) फैलता जा रहा था, साधक, ऋषि–मुनि, प्रजाजन, भयभीत होकर जीवन जीने पर मजबूर थे। देवताओं द्वारा बारंबार प्रार्थना करने पर ईश्वर का अवतरण तो हो गया था, लेकिन जब तक इस असीम सत्ता को अन्याय से लड़ने के लिए कोई तड़पन पैदा नहीं करता, सब पर कृपा बरसाने वाली ईश्वरी शक्ति कहाँ जाग्रत होती है। माँ कैकेई के मन में जन कल्याण करने की, अत्याचार अनाचार को समाप्त करने की जो तड़पन थी, उसकी आवाज को सुनने वाला उनका ही प्रिय पुत्र राम ही तो था। माँ कैकेई यह जानती थीं कि इस फैलती आग को केवल राम ही शीतल कर सकते हैं। बस यही कारण बना राम–वन–गमन का। कितना महानतम बलिदान माता कैकेई का था, जिनको ज्ञात था कि महाराज दशरथ पुत्र वियोग को सहन नहीं कर पायेंगे, मुझे वैधव्यता का फल मिल सकता है, प्रजा तथा

राजघराने का कलंक, सूर्यकुल की कलंकिनी, भरत जैसे प्रिय पुत्र का विरोध सब कुछ स्वयं के लिए असहनीय वेदना की सच्ची कल्पना थी, लेकिन राजधर्म, प्रजा की भलाई, मानवकल्याण, भविष्य को एक आदर्श समाज की व्यवस्था, राजा का कर्त्तव्य बोध सामने सत्य को स्वीकारने खड़ा था। राम का पराक्रम ही राक्षसराज को समाप्त करने में सक्षम था। इस बात को माता कैकेई भली भाँति जानती थीं। राम अवतार का हेतु राक्षस विहीन समाज की संरचना की प्रतिज्ञा थी, फिर भी माता कैकेई का सबने तिरस्कार किया, पर राम ने माता कैकई के जन कल्याण भाव को पहचान लिया था, चित्रकूट मिलन के प्रसंग में गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं –

प्रथम राम भेंटी कैकेई। सरल सुभायँ भगति मति भेई।।
पग परि कीन्ह प्रबोधु बहोरी। काल करम बिधि सिर धरि खोरी।।

(2 / 244 / 7–8)

इतना ही नहीं चित्रकूट में जब भरत जी अपने मन की व्यथा श्रीराम जी को सुनाते हैं, तब उन्हें आश्वस्त करते हुए श्रीराम जी कहते हैं कि माता कैकेई को वही लोग दोष दे सकते हैं जो जड़ बुद्धि के हैं और जिन्होंने साधु संगत नहीं की अर्थात् जिनके विचार निर्मल नहीं हैं –

उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई। जाइ लोकु परलोकु नसाई।।
दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई।।

(2 / 263 / 7–8)

चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात अयोध्या लौटने पर श्रीराम जी सबसे पहले माता कैकेई के भवन में जाते हैं –

प्रभु जानी कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी।।
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा।।

(7 / 10 / 1–2)

चित्रकूट के मार्ग में जब भरत जी मुनि भरद्वाज जी के आश्रम में उनके समक्ष सिर नीचा करके बैठ जाते हैं तब मुनि भरद्वाज भी यही कहते हैं कि तुम्हारी माता कैकेई का कोई दोष नहीं है –

तुम्ह गलानि जियँ जनि करहु समुझि मातु करतूति।
तात कैकइहि दोसु नहिं गई गिरा मति धूति।।

(2 / 206)

आज जो आतंकवाद हमारे जंगलों का सहारा लेकर पनप रहा है उसके लिए माता कैकेई जैसी– माताओं की आवश्यकता है जो अपने सुयोग्य पुत्रों को इस महती कार्य के लिए आगे लाएँ, किसी को तो बलिदान देगा होगा, तभी यह आतंकवाद, राक्षसराज समाप्त होगा। माता कैकेई के बलिदान को कौन भुला

सकता है। यदि माता कैकेई रामवनवास न माँगतीं तो राक्षसराज का आतंकवाद कैसे समाप्त होता? कवि की भाव लेखनी ने लिखा –

कैकेयी ने संताप दिया, दुखी अयोध्या धाम।
इस रहस्य को कोई न जाने, जाने केवल राम॥

भगवान राम ने वन–पथ में विचरण किया। ईश्वर, प्रकृति दो अलग–अलग उपादान नहीं हैं, बल्कि एक–दूसरे के पूरक हैं। ईश्वर जब वन–पथ पर चल रहा हो, तब भला प्रकृति की कृपा दूर कैसे रह सकती है। चित्रकूट से जब श्रीराम ने दण्डकारण्य में प्रवेश किया, उस समय प्रकृति को सीताराम के चरणों में कंटक लगे देखकर दारुण दुःख पैदा हुआ होगा और प्रकृति ने तब अपना स्वभाव ही बदल डाला। काँटों भरे वृक्षों को दण्डकारण्य से हटा दिया और प्रचण्ड धूप से बचाव हेतु बादल श्रीरामजी के ऊपर छाया कर रहे हैं।

परसि राम पद पदुम परागा। मानति भूमि भूरि निज भागा॥
छाँह करहिं घन बिबुधगन बरषहिं सुमन सिहाहिं।
देखत गिरि बन बिहग मृग रामु चले मग जाहिं॥

(2 ⁄ 113)

उपायने पग से चलते देख दण्डकवासी भोली–भाली प्रजा ने भी उन्हीं के साथ उपायने पायन ही साथ साथ चलना प्रारम्भ कर दिया और ईश्वर के प्रति इतना उत्कट प्रेम कि जीवन भर बिना पादत्राण के चलना स्वीकार कर लिया। वनवासी इसीलिये आज भी उसी संकल्प के लिए उपायने पायन ही चल रहे हैं, कितना दृढ़ प्रेम, वे ईश्वर के उस दर्द को आज भी सहजकर रखे हुए हैं। जीवन में संकल्प शक्ति के इस प्रकार के ऐतिहासिक उदाहरण ही हमारे आदर्श हैं। आज संकल्पशीलता का अभाव हो रहा है। एक नारी के संकल्प ने जन–कल्याण कर दिया। वनवासी आज भी उसी संकल्प को लेकर चल रहे हैं। हमारा कर्तव्य है कि एक माता ने जो कर दिखाया था, उस ओर निहारें, सोचें और संकल्प लें तथा वर्तमान में फैले भयवाद, आतंकवाद आदि से समाज को मुक्ति दिलाएँ। ऐसा करने से ही रामायण में वर्णित प्रसंगों की प्रासंगिकता आज हमारे बीच होगी। इस परिप्रेक्ष्य में कि यदि माता कैकेई ने श्रीरामजी को वनवास न दिया होता तो राक्षसराज और उनका आतंक कैसे समाप्त होता, हम उनके प्रति आभार व्यक्त करें और अपनी आने वाली पीढ़ी में इन विचारों को प्रचारित करें।

आजकल अच्छी नसीहतों का असर शायद इसलिये नहीं होता, क्योंकि लिखने वाले और पढ़ने वाले दोनों ये समझते हैं कि ये दूसरों के लिये हैं।

मैं दुनिया से लड़ सकता हूँ पर अपनों से नहीं, क्योंकि अपनों के साथ मुझे जीतना नहीं, बल्कि जीना है।

रघुपति भगति सजीवन मूरी

श्री राजेश तिवारी 'मक्खन',
झांसी (उ0प्र0) फोन : 9451131195

आज अधिकांश मनुष्य अस्वस्थ हैं। बहुत से नए–नए रोग पैदा हो रहे हैं। कुछ रासायनिक पदार्थ भी नए रोगों को पैदा कर रहे हैं। कितने तरह के रोग होते हैं। रोगों की संख्या कितनी है यह तो डॉक्टर भी बतलाने में असमर्थ हैं। कलियुग का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदास लिखते हैं –

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारनहीं।।

(7 / 102 / 1)

कलियुग में लोग रोगों से पीड़ित होंगे, भोग सुख कहीं नहीं होगा, बिना कारण ही अभिमान और विरोध होगा –

सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी।।
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सव सम चौदह प्रानी।।

(6 / 31 / 3)

सदा रोगी रहने वाला निरंतर क्रोध युक्त, भगवान विष्णु से विमुख, वेद और संतों का विरोधी, केवल अपना शरीर पोषण करने वाला, परायी निन्दा करने वाला और पाप की खान अर्थात पापी यह सब चौदह प्राणी जीते भी मुर्दे के समान हैं। स्वस्थ का अर्थ है अपने आप में स्थित (आत्मस्थ) होना है। आजकल अधिक संख्या में अधिकतर मनुष्य आत्मस्थ नहीं हैं। जो अपने स्वरूप में स्थित नहीं है, वह अस्वस्थ है। इस अस्वस्थता के लिए सबसे अच्छी औषधि राम भक्ति है। भव रोग से ग्रसित मानव के लिए यह राम नाम ही संजीवनी बूटी है –

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए।।
तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी।।

(7 / 14 / 5 छंद)

भगवान भोलेनाथ कहते हैं कि लोग बहुत से रोगों और वियोगों (दुखों) के मारे हुए हैं। यह सब आपके श्री चरणों के निरादर का फल है। हे रघुनाथ जी! मैं आपका नाम जपता हूँ और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म–मरण रूपी रोग की महान औषधि और अभिमान के शत्रु हैं। भगवान शंकर कहते हैं यह रामकथा संसृति (जन्म–मरण) रूपी रोग के नाश के लिये संजीवनी बूटी है, वेद और विद्वान लोग ऐसा कहते हैं। किसी भक्त के हृदय के भाव हैं –

यह भव रोग मिटाने वाली राम नाम अनमोल जड़ी।
मन सीता राम सीता राम सीता राम जप ले घड़ी घड़ी।।

भगवान का नाम अनमोल बूटी है जो भव रोग को नष्ट करने वाली है। केवल भगवान का नाम ही नहीं, भगवान का धाम भी त्रिताप का नाशक है –

पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि।।

(6 / 120 / 9)

भगवत् धाम श्री अयोध्या जी में, रामराज्य में किसी भी प्राणी को कोई रोग नहीं सताता था –

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।

चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहि भय सोक न रोग।।

(7 / 20)

भगवान की भक्ति वह जड़ी है, जिससे अचेत आदमी होश में आ जाता है और फिर कभी बेहोश (मूर्छित) नहीं होता। रघुपति भक्ति संजीवनी बूटी है। इसका उदाहरण देखिये जब लखन लाल जी पर मेघनाद ने शक्ति प्रहार किया और वे मूर्छित हो गए, तब –

राम पदारबिंद सिर नायउ आइ सुषेन।
कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन।।

(6 / 55)

सुषेण वैद्य ने आकर श्रीराम जी के चरणारविन्दों में सिर नवाया फिर पर्वत और औषधि का नाम बतलाया और कहा हे पवनपुत्र! औषधि लेने जाओ। उनके कहने पर श्री हनुमान जी हर्षित होकर संजीवनी लेने के लिए गए। वहाँ जाकर देखा –

देखा सैल न औषध चीन्हा। सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा।।

(6 / 58 / 7)

पर्वत पर अनेक औषधियाँ हैं, पर उस औषधि को वे पहचान न सके और एकाएक उस पर्वत को जिस पर औषधियाँ थीं, उखाड़ लिया और चल दिये। वापिसी में, जब अयोध्या के ऊपर से लौट रहे थे तो भाई भरत के बाण से घायल होकर पृथ्वी पर गिरे और मूर्छित हो गए, तो भगवान श्रीराम के प्रिय भाई अनन्य भक्त भरत ने **'रघुपति भगति संजीवनी मूरी'** को सिद्ध कर दिखा दिया। भाई भरत लाल ने हनुमान जी की मूर्छा दूर करने के लिए राम भक्ति का आश्रय लिया। अपनी अनन्यता दिखलाते हुए कहा –

जौं मोरें मन बच अरु काया। प्रीति राम पद कमल अमाया।।

तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला। जौं मो पर रघुपति अनुकूला॥

(6 / 59 / 6–7)

अगर मैं मन वचन कर्म से भगवान श्रीराम का सच्चा सेवक हूँ और प्रभु की हमारे ऊपर कृपा है, तो उस भक्ति की शक्ति से यह कपि श्रम और शूल से विगत हो चेतना को प्राप्त हो जाए। भरत जी के इतना कहते ही हनुमान जी होश में आ गए और मन ही मन भाई भरत की सराहना करने लगे।

भरत सरिस को राम सनेही। 'जगु जप राम रामु जप जेही।'

(2 / 218 / 7)

जिस भाई की भक्ति की चर्चा भगवान श्रीराम करते हैं वह वास्तव में सत्य व सराहनीय है। इनकी भक्ति का आज साक्षात दर्शन हुआ। अगर ऐसी भक्ति मुझमें होती तो मुझे इतना श्रम करने की क्या आवश्यकता थी? मैं भी इसी तरह लखन लाल की मूर्छा दूर कर सकता था। धन्य है भाई भरत लाल जी की अनन्यता। इनके दर्शन से भी भव रोग मिटता है। मैं आज इनके दर्शन करके धन्य हो गया –

ते सब भए परम पद जोगू। भरत दरस मेटा भव रोगू॥

(2 / 217 / 2)

विचारणीय तथ्य है कि कैंसर से भी कई गुना खतरनाक रोग है भव रोग, जो बार–बार जन्म–मरण के चक्कर में डाल रहा है। इस रोग की परम औषधि है राम भक्ति। कलिकाल व्याल से ग्रसित लोगों के लिए यह मणि औषधि है –

ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी॥
राम भगति मनि उर बस जाकें। दुख लवलेस न सपनेहुँ ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

(7 / 120 / 8–10)

बड़े–बड़े मानस रोग, जिनके वशीभूत होकर सब जीव दुखी हो रहे हैं, ये उनको नहीं व्यापते जिनके हृदय में श्रीराम भक्ति रूपी मणि होती है। उनको सपने में भी दुख का लवलेश नहीं भासता है। जो इस मणि को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, वे ही चतुरों में श्रेष्ठतम हैं। यह मणि जहर उतारने के साथ–साथ उजाला भी करती है। यह इहलोक और परलोक को भी सुधारने वाली है –

राम नाम मनिदीप धरु जीह देहरीं द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जौं चाहत उजियार॥

(1 / 21)

रोग तो अनेक प्रकार के होते हैं दैहिक, दैविक भौतिक (दैविक दैहिक भौतिक तापा) पक्षिराज गरुड़ जी काकभुशुंडि जी से पूछते हैं –

मानस रोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई।।

(7 / 121 / 7)

आदरणीय आप मानस रोगों को भी समझा कर कहिए। आप सर्वज्ञ हैं और आपकी हमारे ऊपर बहुत कृपा है। तब काकभुशुंडि जी कहते हैं –

सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा।।
मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला।।
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।।
प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजइ सन्यपात दुखदाई।।
विषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना।।
ममता दादु कंडु इरषाई। हरष विषाद गरह बहुताई।।
पर सुख देखि जरनि सो छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई।।
अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ।।
तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी। त्रिबिधि ईषना तरुन तिजारी।।
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लगि कहौं कुरोग अनेका।।

(7 / 121 / 28–37)

श्री काकभुशुंडि जी ने खगराज श्री गरुड़ जी से कहा हे तात! अब मैं मानस रोग कहता हूँ आप श्रवण कीजिए, जिनसे सब लोग दुख पाते हैं। सब रोगों की जड़ मोह (अज्ञान) है। जिससे बहुत से शूल उत्पन्न होते हैं। काम वात है, लोभ बढ़ा हुआ कफ है और क्रोध पित्त है जो हमेशा छाती जलाया करता है। यदि ये तीनों भाई (वात कफ पित्त) प्रीति कर लें, मिल जाएँ तो दुखदायक सन्निपात रोग उत्पन्न होता है, कठिनता से प्राप्त होने वाले जो विषयों के मनोरथ हैं, वे ही सब शूल (कष्टदायक रोग) हैं उनके नाम कौन जान सकता है अर्थात वे अपार हैं। ममता दाद है, ईर्ष्या (डाह) खुजली है, हर्ष विषाद गले के बहुत से गलगंड, कण्ठमाला, घेघा आदि रोग हैं। पराए सुख को देखकर जो जलन होती है, वह क्षय (टी.बी.) रोग है। दुष्टता और मन की कुटिलता ही कोढ़ रोग है। अहंकार अत्यन्त दुख देने वाला डमरू (गाँठ का) रोग है। दंभ कपट, मद और मान, नहरूआ (नसों का) रोग है। तृष्णा बड़ा भारी उदरवृद्धि (जलोदर रोग) है। तीन प्रकार (पुत्रेषणा वित्तेषणा लोकेषणा) की प्रबल इच्छाएँ प्रबल तिजारी हैं। मत्सर और अविवेक दो प्रकार के ज्वर हैं। इस प्रकार अनेक रोग हैं जिन्हें कहाँ तक कहूँ –

एक ब्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु ब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि।।
नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान।।

(7 / 121 क, ख)

एक रोग के वश होकर मनुष्य मर जाता है। फिर ये तो बहुत से असाध्य रोग हैं। ये जीव को निरन्तर कष्ट देते रहते हैं। ऐसी दशा में वह बेचारा समाधि (शांति) को कैसे प्राप्त करे। नियम, धर्म, आचार (उत्तम आचरण) तप, ज्ञान, जप, दान तथा और भी करोड़ों औषधियाँ हैं, परन्तु हे गरुड़ जी! उनसे ये रोग नहीं जाते हैं –

एहि बिधि सकल जीव जग रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी॥
मानस रोग कछुक मैं गाए। हहिं सब कें लखि बिरलेन्ह पाए॥
जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी॥
बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे॥
राम कृपाँ नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संजोगा॥
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा॥
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी॥
एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं॥
जानिअ तब मन बिरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिकाई॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई। बिषय आस दुर्बलता गई॥
बिमल ग्यान जल जब सो नहाई। तब रह राम भगति उर छाई॥

(7/122/1–11)

इस प्रकार संसार के समस्त जीव रोगी हैं। जो शोक, हर्ष, भय, प्रीति और वियोग के दुख से दुखी हो रहे हैं। मैंने ये थोड़े से मानस रोग कहे हैं। ये हैं तो सबको परन्तु इन्हें जान पायेगा कोई बिरला ही। प्राणियों को जलाने वाले ये पापी रोग जान लिए जाने से कुछ क्षीण अवश्य हो जाते हैं, परन्तु नष्ट नहीं हो पाते हैं विषय रूप कुपथ्य पाकर ये मुनियों के भी हृदय में अंकुरित हो जाते हैं, तब बेचारे साधारण मानवों की तो बात ही क्या है?

यदि श्रीराम जी की कृपा से इस प्रकार का संयोग बन जाए तो ये रोग नष्ट हो जाएँ। सद्‌गुरु रूपी वैद्य के वचन में विश्वास हो। विषयों की आशा न करें। यही संयम (परहेज) है। श्रीरामचन्द्र जी की भक्ति संजीवनी जड़ी–बूटी है। श्रद्धा से पूर्ण बुद्धि ही अनुपान (दवा के साथ लिया जाने वाला मधु) है। इस प्रकार का संयोग हो तो वे रोग भले ही नष्ट हो जाएँ, नहीं तो करोड़ों प्रयत्न करने पर भी नहीं जाते। हे गोसाईं! मन को नीरोग हुआ तब जानना चाहिए, जब हृदय में वैराग्य का बल प्रबल हो जाए। उत्तम बुद्धि रूपी भूख नित नयी बढ़ती रहे और विषयों की आशा रूपी दुर्बलता मिट जाए। इस प्रकार सब रोगों से छूटकर जब मनुष्य निर्मल ज्ञान रूपी जल में स्नान कर लेता है, तब उसके हृदय में राम भक्ति छा जाती है –

रामकथा कलि कामद गाई। सुजन सजीवनि मूरि सुहाई॥

(1/31/7)

भगवान श्रीराम की कथा कलियुग में तो कामधेनु के समान है। सज्जनों के लिए सुन्दर संजीवनी है। उपासक में अपने इष्ट उपास्य के सद्गुणों का शनैः शनैः समावेश हो जाता है। भूत प्रेतों के भक्त उन्हीं जैसे गुण वाले देखे जाते हैं जो शराब माँस आदि दुर्व्यसन से ग्रस्त होते हैं। यदि मानव समुदाय श्रीराम का भक्त होगा तो उसमें श्रीराम की तरह मर्यादामय उदात्त आदर्श गुणों का होना स्वाभाविक है। आज इसकी ही परम आवश्यकता है।

मनुष्य जो अच्छे या बुरे कर्म करता है उससे पाप और पुण्य बनता है और यही पाप रोग बन कर पीड़ा देते हैं। कहा गया– **'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्'** (देवी भागवत)। इस संसार में रोग और दवा, जहर और अमृत आदि सब हैं। जहर सहज में मिल जाता है और अमृत दुर्लभ है –

दानव देव ऊँच अरु नीचू। अमिय सुजीवनु माहुरु मीचू॥

(1/6/6)

इस रघुपति भक्ति का सेवन श्रद्धा रूपी शहद के साथ किया जाता है। यह जड़ी बूटी पवित्र अन्तःकरण निर्मल हृदय में श्रद्धा रूपी जल से पुष्पित पल्लवित होती है, जिसमें आनंद, परमानंद रूपी फूल–फल लगते हैं। इसको भगवान श्रीरामचन्द्र ही पुष्टि प्रदान करते हैं और यह अक्षुण्य भी है। एक बार पैदा होने पर फिर कभी नष्ट नहीं होती। इसकी सुगंध जन्म जन्मान्तरों तक बनी रहती है। जो सभी रोगों की औषधि है उसका सेवन सबको सदैव करना चाहिए –

रघुपति भगति सजीवनि मूरी।

होती आरती, बजते शंख, पूजा में सब खोए हैं।
मन्दिर के बाहर तो देखो भूखे बच्चे सोए हैं॥
एक निवाला इनको देना प्रसाद मुझे चढ़ जायेगा।
मेरे दर पर मांगने वाले तुम्हें बिन मांगे सब मिल जायेगा॥

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति की वार्षिक स्मारिका के लिए भक्ति–ज्ञान–वैराग्य से परिपूर्ण लेख प्रकाशनार्थ भेजने वाले भक्त लेखक **श्री जगत प्रकाश पालीवाल** भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी संवत् 2075 तदनुसार 24 सितंबर सन् 2018 को चिर निद्रा में लीन हो गए। इस अंक में भी उनका लेख प्रकाशित हुआ है। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शान्ति के लिए तथा उनके परिजनों एवं मित्रों को धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।